International Journal of Advanced Education and Research
ISSN: 2455-5746
Impact Factor: RJIF 5.34
www.alleducationjournal.com
Volume 3; Issue 5; September 2018; Page No. 12-16

स्वामी दयानन्द सरस्वती : आधुनिक भारतीय शैक्षिक व्यवस्था की समालोचना और आधुनिक भारतीय शिक्षा का स्वरूप

वर्षा गौतम [1], डॉ० डी०एस० सिंह बघेल [2]
[1] शोधार्थी शिक्षा, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत।
[2] आचार्य एवं विभागाध्यक्ष शिक्षा, लाइफ लांग लर्निंग विभाग अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत।

सारांश
प्रस्तुत शोध स्वामी दयानन्द सरस्वती : आधुनिक भारतीय शैक्षिक व्यवस्था की समालोचना और आधुनिक भारतीय शिक्षा का स्वरूप पर आधारित है। शिक्षा किसी भी समाज में चलने वाली निरंतर एवं उद्देश्य पूर्वक प्रक्रिया है। इसके द्वारा ही मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास होता है। उसके ज्ञान में वृद्धि होती है तथा वह देश के लिए एक योग्य नागरिक बनता है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति के व्यवहार में सकारात्मक मोड़ लाया जा सकता है। व्यक्ति के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन लाया जा सकता है। शिक्षा के आभाव में व्यक्ति के विकास की कल्पना करना असंभव है क्योंकि शिक्षा ही हमें अपने और अपने राष्ट्र के कर्तव्यों के प्रति जागरूक कराती है। पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति की नकल करके आज हम नैतिकता और आदर्शों से दूर होते जा रहे हैं। वर्तमान शिक्षा प्रणाली प्राचीन शिक्षा पद्धति से बिल्कुल अलग है। आज के विद्यार्थी में असंतोष, अनुशासन हीनता, बेरोजगारी, कर्तव्यपलायनता की समस्या जटिल रूप लेती जा रही है। आज की शिक्षा प्रणाली में प्राचीन आदर्शों का समावेश करके इन सभी समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है। प्राचीन या वैदिक शिक्षा के मूलभूत आदर्श श्रद्धा, भक्ति, सेवा, आदर, अनुशासन और ब्रम्हचर्य थे। इन सभी आदर्शों का अनुकरण कर हम वर्तमान शिक्षा या आधुनिक शिक्षा को प्रभावी बना सकते हैं।

मूल शब्द : स्वामी दयानन्द सरस्वती, आधुनिक भारतीय, शैक्षिक व्यवस्था, समालोचना।

प्रस्तावना
शिक्षा के द्वारा ही हम अपनी सभ्यता और संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी तक हस्तांतरित करती है। शिक्षा के द्वारा ही किसी भी देश या समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक उन्नति का अनुमान लगाया जा सकता है, परन्तु वर्तमान में आज शिक्षा का उद्देश्य में परिवर्तन आ गया है। आज शिक्षा का उद्देश्य केवल किसी प्रतियोगिता को पास करना मात्र ही रह गया है। अतः कहा जा सकता है कि वर्तमान में शैक्षिक उद्देश्यों और उसकी गुणवत्ता में काफी अंतर आ गया है।
पिछले कई दशकों से शिक्षा के उद्देश्यों में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की जा रही है क्योंकि आज का युवा एक मशीन की तरह हो गया है जो हर कोई किसी ना किसी नौकरी की चाहत में स्नातक और स्नातकोत्तर की डिग्री पाने की होड़ में लगा हुआ है कि चाहे उसके पाने के लिए जो भी रास्ता चुनना पड़े। आज किसी का लक्ष्य निर्धारित नहीं है। किसी भी तरह रोजगार प्राप्त करना हो गया है। उसके लिए हर रास्ता अपनाने के लिए तैयार है। मेहनत करने के बजाये वो किसी बड़ी हस्ती की पहचान पर अधिक विश्वास करता है। इसके विपरीत युवा में इतनी शक्ति, क्षमता और बुद्धि है कि वह स्वयं ही रोजगार का निर्माण कर सकता है। वर्तमान में हम महापुरूषों द्वारा दिखाये गये रास्ते से भटक गये हैं।
शिक्षण प्रणाली को सुधारने के कई प्रयास किये जा रहे हैं, परन्तु वे आज सफल नहीं हो पा रहे हैं।
परिवर्तन की सफलता के लिए आवश्ययक है कि शैक्षिक परिवेश का गहराई से अध्ययन किया जाना चाहिए और साथ ही सभी के लिए शिक्षा अनिवार्य की जानी चाहिए।
शैक्षिक परिवेश में सर्वप्रथम नैतिक शिक्षा पर गहराई से अध्ययन करना चाहिए।

नैतिक शिक्षा
शिक्षा प्राप्त करने का प्रथम उद्देश्य है कि बालक का चरित्र ऊँचा हो। अर्थात् उसका चारित्रिक विकास हो। बालक के संस्कार ऊँचे हों, युवा देश की शक्ति हो। युवाओं के हाथों में देश का भविष्य है और यदि युवा नैतिकवान और चरित्रवान नहीं होगा, तो देश गर्त में चला जायेगा।
वर्तमान शिक्षा पद्धति का स्वरूप बालक में अनुशासनहीनता और संकीर्ण मानसिकता का पोषण कर रही है। शारीरिक और बौद्धिक विकास पर तो बल दिया जा रहा है, परन्तु भावनात्मक और मानसिक विकास पर जोर नहीं दिया जा रहा है। इस स्थिति में संर्वांगीण विकसित मानव की कल्पना नहीं की जा सकती।
वर्तमान समय में नैतिक शिक्षा केवल एक विषय ही बनकर रह गया है। छात्रों में नैतिकता की कमी से विद्वतजन काफी चिंतित है। इसके लिए उन्होंने नैतिक शिक्षा को एक विषय के रूप में पढ़ाने का विचार दिया, परन्तु इसका परिणाम यह निकला की अन्य विषयों की भांति ही केवल परीक्षा पास करना मात्र ही रह गया है। केवल पुस्तक पढ़ा देने से नैतिक विकास हो जाना संभव नहीं है। जब तक कि उसको जीवन में न उतारा जाय।
अजयेन्द्र नाथ का कथन है कि ''आज हम सबके सामने ऐसे कई छात्रों का उदाहरण है जो नैतिक शिक्षा को याद करके परीक्षा में सफल तो हुये हैं परन्तु उनका आचरण बिल्कुल उसके विपरीत होता है। वे कई जघन्य अपराधों में शामिल रहते हैं और वे अच्छे विद्यालयों के विद्यार्थी होते हैं।'' यदि एक शिक्षित व्यक्ति के अंदर विनम्रता, सदाचार, अनुशासन और चरित्र नहीं होगा, तो वह समाज के लिए एक जानवर के समान है और इंसान रूपी जानवर अधिक खतरनाक होता है। यदि हमारी शिक्षा किसी के काम न आ सके, किसी का कल्याण न कर सके, तो वह शिक्षा व्यर्थ है। अर्थात्

हमारी सोच, विचार को यदि हम उदार और बड़ा न कर पायें तो उस व्यक्ति की शिक्षा व्यर्थ है।

समाज में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा एक बहुत बड़ा साधन है। शिक्षा के द्वारा ही हम अपनी सभ्यता संस्कृति विरासतों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाते हैं। अतः बालक को नैतिकवान बनाने के शैक्षिक योजनाओं में नैतिक शिक्षा को महत्व दिया जाने लगा है।

वर्तमान में जो शिक्षा परिवेश है वह अंग्रेजों के द्वारा निर्धारित थी। अंग्रेज सरकार उसको संचालित करती थी जो पूरी तरह उनके नियमों और हितों पर आधारित थी। जिसके चलते आज बालकों में नैतिकता का पतन हो रहा है वे पाश्चात्य संस्कृति की ओर अधिक आकर्षित हो रहे हैं।

छात्रों में नैतिक स्तर को बढ़ाने के लिए इसे पाठ्यक्रम में शामिल कर दिया गया है, परन्तु इसके लिए समाज के प्रत्येक व्यक्ति को सहयोग देना होगा, क्योंकि जब एक पीढ़ी उसको अपनायेगी तभी वह दूसर पीढ़ी को वही सभ्यता और संस्कृति के संस्कार दे पायेगी। वर्तमान में जो शिक्षा प्रणाली प्रचलित है उसमें शिक्षित व्यक्तियों में नैतिकता का पतन हो रहा है। अतः आवश्यक है कि नैतिक मूल्यों को हम अपने जीवन में शिक्षा का आवश्यक अंग बनायें और मूल्यों को ईमानदारी से अपने जीवन में उतारें। तभी एक सकारात्मक विकास संभव होगा।

शिक्षा का व्यवसायीकरण

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में जो गिरावट महसूस की जा रही है उसका मुख्य कारण यह है कि आज शिक्षा का बाजारीकरण हो गया है। शिक्षा केन्द्र केवल पैसा कमाने का एक साधन मात्र रह गया है क्योंकि शिक्षा केन्द्र निजि संस्थाओं के हाथ में आ गई है और वे अपना निजि स्वार्थ सिद्ध करते हैं। अपने लाभ पर अधिक ध्यान देते हैं।

शिक्षा को निजि संस्था के हाथों में देने के पीछे कारण यह था कि जन समुदाय बहुत बड़ा है और सभी लोगों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। और आयोग के पास पर्याप्त संसाधनों की कमी है। अतः शिक्षा व्यवस्था को निजि करण करने का फैसला लिया गया और यह भी सुझाव रखा गया कि इससे शिक्षा के स्तर में, गुणवत्ता में सुधार होगा और प्रतिस्पर्धा भी बढ़ेगी, परन्तु कालान्तर में आते–आते इस व्यवस्था के दुष्परिणाम सामने आने लगे। देश के निजि स्कूल उद्योगों के रूप में बदलने लग गये। संस्था के मालिकों का अधिकार होने पर उन्होंने मनमाने ढंग से फीस वसूल करने लगे। यहाँ सिर्फ अमीरों और पूंजीपतियों के बच्चे पढ़ने लगे और ये संस्थायें कुकुरमुत्ते की तरह पनपने लगी। इन संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य अब केवल अधिक से अधिक लाभ कमाना रह गया है। जिन उद्देश्यों को लेकर इनकी स्थापना की गई थी वह उद्देश्य कहीं गुम हो गया।

आज शिक्षा का कार्य समाज में परिवर्तन लाना न रहकर केवल धन एकत्र करना ही रह गया है। शिक्षा संस्थाओं का उद्देश्य ज्ञान देना, अनवाचार न होकर केवल व्यापारिक केन्द्र बनकर रह गया।

ये संस्थायें बेखौफ होकर मनमानी करते हैं क्योंकि सरकार द्वारा इनको खुली छूट दी गई है और सरकारी महकमों में भी पर्याप्त भ्रष्टाचार है। निजी संस्थाओं में छूट देने में इनका अपना निजी लाभ छिपा रहता है। अतः इस ओर देखकर भी अनदेखा कर दिया जाता है और निजी संस्थाओं की हिम्मत भी बढ़ती जा रही है और इसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि दो प्रकार की शिक्षा प्रणाली विकसित हो गई है। एक सरकारी स्कूलों से शिक्षित और एक बड़े और आलीशान सर्वसुविधायुक्त प्राइवेट स्कूलों से निकले शिक्षित वर्ग की। सरकारी स्कूलों के बच्चे निजी स्कूलों के बच्चों के सामने अपने आप को हीन समझते हैं।

बल्देवराज गुप्ता जी का कथन है– '' पूरी शिक्षा व्यवसाय के समान्नतर एक ''वित्त आधारित'' डिग्री व्यवस्था मजबूती से पैर जमाकर भारतीय शिक्षा केन्द्रों और विश्वविद्यालयों को चिढ़ाने के लिए खड़ी हो गई है। उसकी चमक–दमक के आगे सरकारी संस्थायें कमतरी के शिकार हो गये हैं। उन्होंने प्राइवेट कालेजों की तरह ''वित्त पोषित'' डिग्रियाँ बेचना शुरू कर दिया है। जिससे शिक्षा में पतन का प्रांरभ तेजी से हुआ।''

शिक्षा नीति निर्माताओं ने जिस उद्देश्य को लेकर इस व्यवस्था की शुरूआत की थी, उसका लाभ उच्च, धनाड्य वर्ग ने तो पूरा उठाया, परन्तु इसका लाभ गरीबों के बच्चों को नहीं मिल पाया। आर्थिक दृष्टि से हीन और कम पढ़े लिखे होने के कारण सरकारी स्कूलों में पढ़ना पढ़ता है। जहाँ प्राथमिक सुविधाओं का भी आभाव रहता है। आज सरकार भी भ्रष्ट हो गई है वह भी शिक्षा को व्यवसाय के रूप में देखती है। ऐसी स्थिति में गरीबों के बच्चे कैसे उच्च शिक्षा प्राप्त कर पायेगें। सरकारी स्कूलों में ना ही शिक्षक है न ही भवन हैं भौतिक सुविधायें। ऐसे में सभी जो थोड़ा बहुत व्यवस्था कर सकता है वह निजी स्कूलों की तरफ आकर्षित हो जाता है।

शिक्षा के स्तर में आई गिरावट को और बाजारीकरण को रोकने के लिए आवश्यक है। सबसे पहले तो सरकारी महकमों में अंकुश लगाये और सरकार कोई ठोस और कारगर उपाय करें तथा मजबूती से उसका पालन करें। निजी संस्थाओं में भी अंकुश लगायें कि वे अपने ढंग से किसी भी प्रकार की मनमाना ना कर सकें।

शिक्षा के स्तर में गिरावट

स्वतंत्रता के बाद हमारे देश का विकास बहुत ही तीव्र गति से हुआ हैं वर्तमान में देश में काफी विकास हुआ है। शिक्षा प्रणाली भी अपने–अपने समाज के अनुरूप ढलती चली गई। स्वतंत्रता के इतने सालों के बाद शिक्षा केन्द्रों में तो वृद्धि हुई है, परन्तु शिक्षा के स्तर में उसकी गुणवत्ता में कोई सुधार नहीं हो पाया।

आज हर महकमों में भ्रष्टाचार का बोल बाला है। हर कोई अपना निजी लाभ पहले देखता है। समाज को कुछ अच्छा या नया देना उनकी सोच का हिस्सा नहीं होता है। यदि कोई एक व्यक्ति कुछ करना भी चाहता है तो बाकी लोग मिलकर उसको पीछे खींच लेते हैं।

शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए कई आयोगों ने कई सुझाव दिये, कई समितियों का गठन हुआ, राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर कई घोषणायें हुई, परन्तु इसके स्तर में वुद्धि नहीं हो पायी। कोठारी आयोग के अनुसार ''शिक्षा के बहुत बड़े क्षेत्र में वस्तु, तत्व और गुणवत्ता हमारी वर्तमान आवश्यकता और भावी अपेक्षाओं के संदर्भ में अपर्याप्त है।''[1]

शिक्षा के स्तर में गिरावट के कई कारण है। जिसमें सबसे बड़ा कारण सरकारी पदों पर बैठे हुये लोगों की प्रवृत्ति से है जो केवल कागजों में ही विकास को बढ़ाचढ़ा कर दिखाते हैं और वास्तविकता में गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाते। शिक्षा संस्थाओं में विद्यार्थियों की संख्या से ज्यादा भरमार कर लेना उनसे मनमानी फीस लेना। संस्था के प्रमुख शैक्षणिक स्तर को सुधारने के बजाये केवल अपने कार्यकाल को पूरा करने में लगे रहते हैं या फिर राजनेता को प्रसन्न करने में लगे रहते हैं और कम वेतन पर बिना अनुभव वाले शिक्षकों की नियुक्ति करते हैं। छात्र और शिक्षक के बीच एक निश्चित अनुपात होता है, परन्तु उस अनुपात को अनदेखा कर एक शिक्षक के पास कई छात्र की जिम्मेदारी दे दी जाती है जिससे शिक्षक हर विद्यार्थी पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाता

और छात्र का विकास भी नहीं पाता और धीरे–धीरे उसका रूझान भी पढ़ाई से हटता जाता है। इसी कारण परीक्षा पास करना विद्यार्थी की योग्यता का नहीं बल्कि शिक्षक की योग्यता का परिचायक बन गया है यदि अधिक छात्र उत्तीर्ण ना हो, तो इसका अर्थ अध्यापक की शैक्षिक योग्यता है।

शिक्षा के स्तर में गिरावट इतनी आ गई है कि एक सर्वे से ज्ञात हुआ है कि सरकारी स्कूल के कक्ष 5 के बच्चे अपने एक पंक्ति भी नहीं लिख सकते जो दूसरी कक्षा के बच्चे के लिए आसान होगा। आज वर्तमान में शिक्षा में मात्रात्मक वृद्धि हुई है अर्थात् शिक्षा संस्थाओं में पर्याप्त वृद्धि हुई है, परन्तु उनकी शैक्षिक गुणवत्ता में वृद्धि नहीं हो पायी है।

आज आवश्यकता है कि शिक्षा के स्तर में सुधार किया जाये, उसके लिए आवश्यक है कि संस्थाओं में ऐसे बच्चों को प्रवेश दिया जाये, जो उसके काबिल हो। इसके लिए छात्रों को प्रवेश परीक्षा पास करना पड़ेगा। अध्यापकों की नियुक्ति भी योग्यता के आधार पर करना चाहिए और उनको एक सम्मान जनक पारितोषिक भी तय करना चाहिए, ताकि उनमें भी किसी प्रकार का असंतोष ना विकसित हो। शिक्षकों के कार्य एवं घण्टों को निश्चित करना चाहिए। शिक्षक का एक ही कर्तव्य होना चाहिए, बालकों को शिक्षित करना। इसके अलावा शिक्षकों से कोई और अतिरिक्त कार्य ना करवायें। छात्र और शिक्षक के बीच के अनुपात को ध्यान में रखकर प्रवेश देना चाहिए।

शिक्षकों को भी शिक्षा की आवश्यकता होती है। अतः उन्हें कुछ नया सीखने के लिए भी पर्याप्त समय की आवश्यकता होगी। अतः वो उन्हें प्रदान किया जाय। जब भारत गुलाम था तो शिक्षा ने समाज में सामंतवाद और रूढ़िग्रस्तता को बढ़ाया। देश अंग्रेजों का और अंग्रेजी शिक्षा का गुलाम बनता चला गया, जो आज भी नहीं निकल पाया।

अतः आवश्यक है कि शैक्षिक संस्थाओं में अध्ययन अध्यापन से संबंधित सभी आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराई जाय। पुस्तकालयों में पुस्तकों की संख्या व उनके पढ़ने पर जोर दिया जाय। छात्रों में पर्याप्त अनुशासन हो और उपरोक्त बताई गई सभी बातों में ठोस कठम उठाये जाय।

शिक्षा परिसरों में अशांती

आज हमारे भारत देश में हर शिक्षा केन्द्र चाहे विद्यालय हो, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय। हर जगह छात्रों में असंतोष, पढ़ाई में अरूचि, अनैतिकता और अनुशासन हीनता एक जटिल समस्या बनती जा रही है। आय दिन विद्यार्थियों द्वारा हड़ताल जुलूस प्रदर्शन आदि करना साधारण सी बात हो गई, जिसको नियंत्रित करने के लिए पुलिस की सहायता ली जाती है जो छात्रों के साथ कड़ा व्यवहार करती है और इन सब दुर्गुणों के बढ़ने का कारण, अंह का बढ़ना, अपने कर्तव्यों का पालन ना करना और आधे अधूरे अधिकारों की जानकारी होना है। इन दुर्गुणों के बढ़ने का एक बड़ा कारण आज की अध्यापकों की सोच भी है क्योंकि वो खुद शासन के नियमों से संतुष्ट नहीं है तो छात्रों का सही मार्गदर्शन नहीं कर पाती या नहीं करना चाहती है वो छात्रों को नैतिक मूल्यों की जानकारी या शिक्षा नहीं दे पाती है।

विद्यार्थियों में भी यह सोच घर कर गई है कि प्रशासन भी हमारी माँगों को तब तक नहीं मानेगा, जब तक हम आंदोलन नहीं करेंगे और उनकी ये सोच कुछ हद तक सही भी है वे छात्रों की आवश्यकता को ना तो महसूस करते हैं और ना ही उनको पूरा करने के बारे में विचार करते हैं। असंतोष का एक कारण यह भी है कि अध्यापक वर्ग दूसरे तरीकों से आर्थिक लाभ प्राप्त करना चाहते हैं या उनकी सोच केवल आर्थिक लाभ प्राप्त करना ही रह जाता है तो उनका मन विद्यार्थियों को पढ़ाने या सही मार्गदर्शन करने में नहीं लगता। वे भी बालकों को भड़काने का काम करते हैं। कई अध्यापक विद्यार्थियों को विद्यालय में पढ़ाने के बजाये अपनी प्राइवेट ट्यूशन में आने के लिए जोर देते हैं और इसके लिए वे उन्हें डराते या धमकाते भी हैं। खेल के शिक्षक खेल की सामग्री लेने के लिए अपनी ही दुकान का पता बताते हैं व अन्य शिक्षक अन्यत्र कहीं कुछ अलग काम में लगे हुये हैं। ऐसे शिक्षकों से पढ़कर विद्यार्थियों का भी व्यवहार सोच समझ और दृष्टिकोण उन्ही के जैसा हो जायेगा क्योंकि कहावत है ''जैसा अन्न, वैसा मन''। जैसी शिक्षा देने वाले की नियत वैसी ही पाने वाली की सोच। इसी कारण शिक्षा संस्थाओं का वातावरण विस्फोटक होता जा रहा है। आज शिक्षा संस्थान राजनैतिक अड्ड़ों में परिवर्तित होते जा रहे है। राजनैतिक दल भी अपनी शक्ति का प्रदर्शन इन्ही विद्यार्थियों के दम पर करते हैं ये दल अपने फायदे के लिए छात्रों को अनुशसानहीनता सिखाते हैं। जिसका सीधा असर शिक्षण संस्थाओं में पड़ता है और छात्र भी इन दलों के सक्रिय कार्यकर्ता बनना चाहते हैं।

पी0डी0 पाठक का कहना है कि ''आज भारतीय राजनीति का अपराधीकरण हो गया है। इसका दुष्परिणाम शिक्षा के मंदिरों में भी देखने को मिलता है। राजनैतिक दलों ने छात्रों को अपनी स्वार्थ सिद्ध का महत्वपूर्ण साधन बना लिया है। ये दल उनका उपयोग अपनी इच्छानुसार करते हैं। इन्होंने शिक्षा के मंदिरों को अपराधी बनाने वाले कारखाने में परिवर्तित कर दिया है।''

शिक्षण संस्थाओं में राजनीति का प्रवेश नये दौर का नहीं है। इसकी शुरूआत आजादी के पहले से ही पड़ चुकी थी बस अंतर इतना था कि उस समय विदेशी सरकार थी और देश को गुलामी की जंजीरों से हटाने के लिये युवा की आवश्यकता थी, परन्तु दुर्भाग्यवश आजादी के बाद भी राजनीति शिक्षा संस्थाओं का प्रमुख अंग बनी रही और आज भी है।

विश्वविद्यालयों में अनुशासन हीनता की प्रवृत्ति एक जैसी नहीं दिखाई देती। अनुशासन हीनता केवल उन्हीं पाठ्यक्रमों के छात्रों में रहती है। जिनमें पढ़ाई के भविष्य के प्रति अनिश्चितता रहती है। वही ज्यादा अनुशासन हीनता रहती है।

शिक्षा में नवाचार

आजादी के बाद से अब तक देश ने बहुत प्रगति की है। आज का युग वैज्ञानिक युग कहलाता है। नये–नये अविष्कार हो रहे हैं और दूसरे देशों से हमारे संबंध मजबूत होते जा रहे हैं। जिन्होंने हमारे जीवन को भी बहुत अधिक प्रभावित किया है तो शिक्षा के क्षेत्र भी उससे अछूता नहीं है। आज शिक्षा पद्धति और प्रणाली में काफी अंतर आ गया है। दिन–प्रतिदिन नये–नये खोज होते जा रहे हैं और नये–नये साधन विकसित हो रहे हैं। यही नवाचार कहलाता है जो पुरानी परम्परा को संजोकर नये साँचे में ढालकर जनता के सामने प्रस्तुत करते हैं।

जीवन के किसी भी क्षेत्र में नीरसता दूर करने के लिए उसमें बदलाव या परिवर्तन लाना जरूरी है और परिवर्तन वह जो पुराने प्राचीन उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये उसमें कुछ नया जोड़ दे। इसी प्रकार शिक्षा में भी नवाचार आवश्यक है।

शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार लाने के लिए कम्प्यूटर और इंटरनेट का काफी योगदान है। इसके माध्यम से छात्र दूर बैठे अपने घरों में ही शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं या किसी भी चीज के बारे में जान सकते हैं। आज गूगल के माध्यम से किसी भी विषय के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इसके उपयोग से शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन हो रहे हैं। इसी क्षेत्र में इग्नू ने अपनी बेबसाइट ई0

ज्ञानकोष नाम से बनाई है जो इंटरनेट पर ही अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराते हैं।

राजीव मालवीय कहते है कि ''शिक्षा के क्षेत्र में नवाचारों के निरंतर विकास से उसको विकासवान बनाने में बहुत मदद मिली है। नवाचारों के माध्यम से व्यक्ति के चितंन की और सोच की दिशाओं को बदल दिया है। जिसके कारण सामाजिक मूल्यों, आदर्शों में व्यापक परिवर्तन हुआ। शैक्षिक नवाचारों से ज्ञान–विज्ञान के साथ–साथ सामाजिक जन चेतना का जागरण हुआ है।'' आज शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी प्राप्त करना ही रह गया है और यही उसका सबसे बड़ा दोष भी है क्योंकि उस उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो पा रही है। आज की शिक्षा पद्धति में नैतिक विकास, शारीरिक विकास या योग्यता क्षमताओं के विकास की ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है और यही स्थिति छात्रों में असंतोष और अनुशासनहीनता को विकसित करती जा रही है।

आज विद्यालय का भौतिक वातावरण भी छात्रों में असंतोष और उद्ंडता पैदा करने में सहायक होते हैं। संस्थाओं में भौतिक सुविधाओं का आभाव, छात्रों को संख्या से अधिक प्रवेश देना, शिक्षकों का शिक्षण कार्य छोड़कर अन्य कार्यों में संलग्न होना।

इन सब कारणों के साथ एक और कारण भी है जो कम महत्वपूर्ण नहीं है, वो है हमारे (छात्रों) के अभिभावक। क्योंकि अभिभावक बालकों को उज्जवल भविष्य के लिए अर्थोपार्जन में लगे रहते हैं और भूल जाते हैं कि बच्चे की प्रथम पाठशाला उसका घर होता है। उसको संस्कार सबसे पहले उसको घर से ही मिलता है, फिर शिक्षा संस्थओं से।

बेशक इनकी जड़ें बहुत गहरी हैं इनको पूरी तरह से समाप्त कर पाना कठिन है, परन्तु उपचार करना असंभव नहीं है।

इसके लिए सरकार, शिक्षा संस्थाओं शिक्षक समाज और परिवार सभी को एकजुट होकर असंतोष के कारण का पता लगाकर उसको दूर करने के लिए ठोस कदम उठाना चाहिए। साथ ही साथ शिक्षा नीति और शिक्षा प्रणाली में वांछनीय परिवर्तन लाने की कोशिश करनी चाहिए, जो छात्रों के हित में हो।

''समय सापेक्ष नवाचारों द्वारा शिक्षा व्यवस्था को आधुनिक वैज्ञानिक अन्वेषणों से युक्त बनाने में बहुत सहायता मिली है। इसके द्वारा शैक्षिक चेतना का सूत्रपात करने में शैक्षिक स्तर के उन्नयन में शिक्षा की बदली हुई मनोवृत्ति के अनुरूप शिक्षा के नियोजन में बहुत सहायता मिलती है।''[2]

स्वामी दयानंद जी स्वयं एक शिक्षा शास्त्री थे। ये उनकी दूरदर्शिता का ही परिणाम है कि आज जो शिक्षा का स्वरूप है। उसकी कल्पना उन्होंने 125 वर्ष पूर्व ही की थी। ''गुरूकुल प्रणाली'' जो आज एक आवासीय विद्यालय के रूप में प्रचलित है। वर्तमान में शिक्षा का स्वरूप पूर्णतः दयानंद जी के विचारों पर ही आधारित है।

''गुरूकुल प्रणाली''

स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे सम्मुल्लास में बालकों के लिए शिक्षा की उम्र 08 वर्ष के प्रारम्भ से बताया है। 08 वर्ष के बाद माता–पिता का स्थान गुरू ले लेता है। [3] 08 वर्ष के उपरान्त बालकों को विद्यालय भेजना अनिवार्य होता था। महर्षि जी के विचारों से ही प्रेरणा लेकर आर्य समाज ने गुरूकुल पद्धति की स्थापना की।

अतः जब बालक 08 वर्ष के उपरान्त विद्या प्राप्ति के लिए गुरू के पास जाता था तो उसमें संस्कार निरूपण करना, उनको शिक्षित करना, उनका भरण–पोषण करना इन सभी कर्तव्यों का पालन गुरू जी का होता था। जहाँ बालक–बालिकाओं को भेजा जाता है। उस स्थान को महर्षि जी ने पाठशाला गुरूकुल या आचार्यकुल नाम से संबोधित किया।

विद्यार्थी एक गीली मिट्टी के समान होता है, उसे जैसा रूप दे दो वो वैसा बन जाता है। अतः हमें शिक्षा में इस बात का ध्यान सदैव रखना चाहिए कि शिक्षा के माध्यम से हम बालक को क्या बनाना चाह रहे हैं। [4] सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि इसके लिए शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच दूरी न हो, उनके बीच विचारों, संवादों का आदान–प्रदान सदैव होता रहे, जिसके लिए गुरूकुल पद्धति के विद्यालय काफी सफल हो रहे हैं। वर्तमान में नवोदय विद्यालय को पूर्णतः इसी पद्धति पर स्थापित किया गया है। गुरूकुल व्यवस्था के महत्व को बताते हुये सरोज बाला जी कथन हैं कि– ''प्राचीन काल में जिस प्रकार विद्यार्थी गुरूकुल में जाकर शिक्षार्जन करते थे, आधुनिक युग में लगभग उसी प्रकार का वातावरण छात्रावास में रहता है। वहाँ विभिन्न वर्गों के सम्प्रदाय के छात्र/छात्रायें एक साथ जीवन यापन करते हैं। विद्यार्थी संयमित दिनचर्या का पालन करते हैं। माता–पिता के लाड़–प्यार से दूर एक अनुकूल वातावरण में रहकर शिक्षा अर्जन का कार्य करते हैं।'' [5]

शिक्षा का कार्य केवल बालकों को शिक्षित करना ही नहीं है, बल्कि शिखा के माध्यम से एक राष्ट्र को शिक्षित बनाया जाता है, शिक्षा के माध्यम से देश विकास की ओर अग्रसर होता है।

वर्तमान में जितने भी आवासीय विद्यालय हैं वे किसी न किसी गुरूकुल पद्धति पर ही आधारित हैं। [6] जिनमें राजस्थान का वनस्थलीय विद्यापीठ प्रमुख हैं। ये पूर्णतः स्वामी जी के विचारों पर आधारित हैं।

शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए एक ऐसी शिक्षण प्रणाली की आवश्यकता महसूस हुई जो राष्ट्रीय एकता की भावना को विकसित कर सकें। गुरूकुल शिक्षा प्रणाली इस ओर पहला कदम था। यहाँ प्रत्येक छात्र अलग–अलग स्थान से आता है। छात्र प्रत्येक के साथ मित्रता करते हैं तथा वहाँ कि भौगोलिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक स्थिति को समझने का प्रयास करते हैं। इसके माध्यम से हम अपने राष्ट्र को समझते हैं और राष्ट्रीय एकता विकसित होती है।

निष्कर्षः

अतः परिणामस्वरूप यह कहा जा सकता है कि जिस गुरूकुल पद्धति की स्थापना स्वामी जी ने वर्षों पहले की थी। वर्तमान के आवासीय विद्यालय उस गुरूकुल पद्धति का ही प्रतिरूप है।

आधुनिक भारतीय शिक्षा की व्यवस्था का वर्णन करते हुये स्वामी जी ने उम्र के बारे में विस्तृत चर्चा की है।

उम्र :– उम्र के बारे में स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश में वर्णन किया है कि प्रथम 05 वर्ष तक बालक की गुरू उसकी माता होती है। 06–08 वर्ष तक उसके गुरू उसके पिता होते हैं। 08 वर्ष के बाद वो अपने अध्यापक के सानिध्य में आता है।

उम्र के हर पड़ाव में एक सीमा रेखा होती है। चाहे वह शिक्षा प्रारंभ करने का समय हो या शिक्षा पूर्ण करने का। बालक को किस समय अक्षरों का ज्ञान कराना है कब, कौन सी शिक्षा प्राप्त करनी है, इन सब के लिए एक समय निर्धारित है।

स्वामी जी ने वर्षों पूर्व जो उम्र संबंधी विचार रखे थे वे आज भी उतने ही प्रासांगिक हैं। वर्तमान में भी बच्चे 05 साल की उम्र से ही शिक्षा प्राप्त करना प्रारंभ करते हैं।

अनुशासन :– सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय सम्मुल्लास में स्वामी जी ने अनुशासन पर विचार प्रस्तुत करते हुये कहा कि ''उन्ही की संतान

संस्कारवान और शिक्षित होती है, जो अपने बच्चों के पालन–'पोषण में ताड़न करते है और जो लाड़न करते हैं। उनके बच्चे शिक्षित नहीं हो पाते।''

बालक की उदण्डता पर बालक को कठोर दण्ड देने का सुझाव स्वामी जी ने रखा। तभी वे संस्कारवान व शिक्षित होंगे। स्वामी जी का मानना था कि जो माता–पिता और बच्चों व शिष्यों को ताड़न करते हैं। वे उन्हें अपने हाथों मानों अमृत पिता रहे हैं और जो पालक या गुरू ऐसा नहीं करते वे अपने हाथों बच्चों को मानो विष पिला रहे हो, परन्तु आज वर्तमान समय में बाल मनोविज्ञान के आधार पर ताड़न करना अर्थात् बालक के साथ दण्डात्मक व्यवहार करना गलत साबित कर दिया है।

आज के समय प्रत्येक शिक्षण संस्थाओं ने अनुशासन को बनाये रखने में सतत् प्रयत्नशील है। स्वामी जी का मानना है कि यदि बालक को छोटी उम्र में ही अनुशासित कर दिया जाय तो वह अपने जीवन में सफल और अनुशासित ही रहेगा। अतः बाल्यकाल में अनुशासन सिखाने की ज्यादा आवश्यकता है।

अगर आज हम वर्तमान में अनुशासन की प्रासांगिकता पर नजर डाले तो आज अनुशासन की ज्यादा आवश्कयता है। विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं में अनुशासन बनाये रखने का तरीका अलग–अलग हो सकता है, परन्तु आवश्यकता तब भी ओर आज भी है।

गुरूजनों का सम्मान :– वैदिक काल में गुरूजनों का सम्मान अधिक होता था, परन्तु आज भी ऐसे शिक्षक हैं जो हृद्य से छात्रों को कुछ नया सिखाना चाहते हैं और उनके लिए, उनके साथ मेहनत करते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि चाहे वैदिक काल हो गया आधुनिक काल हर काल में गुरूजनों का सम्मान होता रहा है और होता रहेगा।

राज्य द्वारा शिक्षा :– वर्तमान समय में भारतीय शिक्षा का जो रूप देखने में आता है उसका विचार स्वामी जी 120 वर्ष पूर्व ही कर दिया है। आज भी राज्य इस दिशा में लगातार प्रयत्नशील है जैसे सर्वशिक्षा अभियान।

स्वामी जी का विचार था कि शिक्षा में राज्य का योगदान होना चाहिए। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश में ऐसे राजनियम का वर्णन किया है कि 5वें या 8वें वर्ष के उपरानत बालक–बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त करने के लिए पाठशाला भेजना आवश्यक है।

आज शिक्षा का जो स्वरूप है वह स्वामी जी के आदर्शों पर ही आधारित है। शिक्षा का क्षेत्र ऐसा है जिसे अर्थशास्त्र के अनुसार अनुत्पादक कहा जाता है। इसलिए इसमें राज्य के सहयोग की आवश्यकता होती है।

आज राज्य शिक्षिकों का वेतनमान का भार वहन करता है। आधुनिक शिक्षा का स्वरूप के निर्धारण का श्रेय स्वामी जी को ही जाता है परन्तु इसका अक्षरशः पालन नहीं हो रहा है। पाश्चात्य शिक्षा के आगे यह प्रभावहीन सिद्ध हो रहा है।

सन्दर्भ

1. शिक्षा आयोग 1969–1966 शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार पृ0–07
2. शैक्षिक तकनीकी एवं नवाचार–राजीव मालवीय, पृ0–38
3. राजेन्द्र जिज्ञासु, सत्यार्थ प्रकाश क्या और क्यों, पृ. 47
4. मनमोहन आर्य, महर्षि दयानंद द्वारा लिखित व प्रकाशित ग्रन्थों पर एक दृष्टि
5. महर्षि दयानंद और प्राचीन परम्परायें, सरोजवाला, पृ0–06
6. अमर उजाला, नवजागरण के पुरोधा स्वामी दयानंद